ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2023; 9(2): 89-92
www.allresearchjournal.com
Received: 08-11-2022
Accepted: 14-12-2022

Dr. Gauri Bhatnagar
Assistant Professor, Department of Sanskrit, Shri Durga Mahila Mahavidyalaya, Tohana, Fatehabad, Haryana, India

Corresponding Author:
Dr. Gauri Bhatnagar
Assistant Professor, Department of Sanskrit, Shri Durga Mahila Mahavidyalaya, Tohana, Fatehabad, Haryana, India

महाभारत काल में राजा और प्रजा के संबंध

Dr. Gauri Bhatnagar

प्रस्तावना

महर्षि वेदव्यास प्रणीत महाकाव्य महाभारत का आधार कौरव पाण्डवों का ऐतिहासिक आख्यान है । परन्तु इसे लिखने का उद्देश्य मात्र कौरव पाण्डवों के युद्ध का चित्रण ही नहीं है, अपितु आर्य धर्म का विस्तृत चित्रण भी प्रमुख उद्देश्य रहा है। इतिहास होने के कारण यह ग्रन्थ यदि हमारे पूर्वजों के इतिवृत्त को अवगत कराता है तो दूसरी ओर ऐहिक, आमुष्मिक तथा निःश्रेयस मार्ग का प्रदर्शक होने के कारण हमारे समक्ष धर्मशास्त्र का भी उपदेश करता है।[1] इसी कारण यह संसार का महानतम ग्रन्थ सुन्दर इतिहास, रुचिर धर्मशास्त्र तथा रमणीय एवं आह्लादक काव्य के रूप में समस्त विश्व में सर्वाधिक मान्यता प्राप्त है[2]

राजा और प्रजा के सम्बन्ध

महाभारतकाल में प्रजा का महत्त्वपूर्ण स्थान था । राजसत्ता मात्र अनियन्त्रित न थी किन्तु प्रजा की राय लेने में राजा सावधानी रखते थे। अतः प्रजा की राय लेने की प्रथा थी। ऐसा कहा गया है कि इस लोक मे प्रजावर्ग को प्रसन्न रखना ही राजाओं का सनातन धर्म है, सत्य की रक्षा तथा व्यवहार की सरलता ही राजोचित कर्त्तव्य है ।[3]

राजा का प्रमुख कार्य प्रजा की रक्षा करना था।[4] राजा का कर्त्तव्य था कि वह अग्नि, सर्प, रोग तथा राक्षसों के भय से अपने सम्पूर्ण राष्ट्र की रक्षा करे।[5] प्रजा की रक्षा करते हुये यदि राजा के प्राण चले जायें तो भी वह उसके लिये महान् धर्म था।[6] ऐसा कहा गया है कि जो राजा आलस्य छोड़कर राग-द्वेष से रहित हो सदा प्रजा की रक्षा करता है, दान देता है तथा निरंतर धर्म एवं न्याय में तत्पर रहता है, उसके प्रति प्रजावर्ग के सभी लोग अनुरक्त रहते हैं।[7] जब राजा प्रजा की रक्षा करता है, तो सब लोग धर्म का पालन करते हैं, कोई किसी की हिंसा नहीं करता तथा सभी एक दूसरे पर अनुग्रह रखते हैं।

साथ ही तीनों वर्णों के लोग अनेक बड़े-बड़े यज्ञों का अनुष्ठान करते हैं और मनोयोगपूर्वक विद्याध्ययन में लगे रहते हैं। [8]

राजा चारों वर्णों के धर्मों की रक्षा करता था तथा प्रजा को धर्मसंकररक्षा से बचाना राजा का सनातन धर्म था। [9] वह कामभोग में आसक्त न होकर समस्त प्रजाओं के साथ समानभाव से व्यवहार करता था तथा पापपूर्ण इच्छाओं का अनुसरण नहीं करता था। [10] इस प्रकार राजा के द्वारा भली-भाँति सुरक्षित हुये मनुष्य राज्य में जिस धर्म का आचरण करते थे, उसका एक चौथाई भाग राजा को भी प्राप्त होता था। [11]

प्रजा के लिये राजा ही प्रमाण था । अतः राजा को मिथ्या कथन का अधिकार नहीं था। [12] प्रजा के मन को प्रिय लगने वाले कार्य करने वाले राजा के प्रति प्रजा भक्तिभाव रखती थी। [13] प्रजा राजा को ही समदर्शी एवं माता-पिता के समान विश्वसनीय मानती थी। [14] राजा का कर्त्तव्य था कि वह सम्पूर्ण प्रजा पर अनुग्रह करते हुये सब वर्णों को सन्तुष्ट रखे, किसी का भी विरोध न करके सबके हितसाधन में लगा रहे, सबको खुले हाथ दान दे तथा किसी पर बल-प्रयोग न करे। [15] राजा के ऐसे व्यवहार के कारण प्रजा उसके प्रति पिता के समान अनुराग रखती थी। [16] श्रेष्ठ राजा होने पर प्रजा भी सत्य - व्रत - पालन में तत्पर होकर यज्ञ-कर्म में लगी रहती थी। [17] राजा का दूसरों के द्वारा पराभव होने पर यह समस्त प्रजा के लिये दुःखदायी होता था, अतः प्रजा का कर्त्तव्य था कि वह राजा के लिये छत्र, वाहन, वस्त्र, आभूषण, भोजन, पान, गृह, आसन तथा शय्या आदि सभी प्रकार की सामग्री भेंट करे। [18] इस प्रकार प्रजा की सहायता प्राप्त राजा दुर्धर्ष तथा प्रजा की रक्षा करने में समर्थ हो जाता था। राजा का कर्त्तव्य था कि प्रजावर्ग के लोग उससे कुछ पूछें तो मधुर वाणी में उत्तर दें। [19] अपनी उन्नति की इच्छा रखने वाला मेधावी, स्मरणशक्ति से सम्पन्न एवं कार्यदक्ष मनुष्य नियमपूर्वक रहकर मन और इन्द्रियों को संयम में रखते हुये राजा का आश्रय ग्रहण करता था । [20] राजा कभी अनुचित, असत्य, असहय तथा अप्रिय बात नहीं कहता था। साथ ही वह सदैव प्रजा का तथा स्वयं का हित करने की चेष्टा करता था। [21]

राजा अपने राज्य के किसान-मजदूर आदि श्रमजीवी मनुष्यों के प्रति अज्ञात नहीं रहता था। उनके कार्य तथा गतिविधि पर उसकी दृष्टि रहती थी। साथ ही वे लोग भी राजा के प्रति विश्वासपात्र होते थे। राजा इन श्रमजीवी मनुष्यों को बार-बार छोड़कर पुनः काम पर लेने का कार्य नहीं करता था। [22] वह कृषि आदि कार्य विश्वसनीय लोभरहित तथा बड़े-बूढ़ों के समय से चले आने वाले कार्यकर्त्ताओं से ही कराता था । [23] राजा का कर्त्तव्य था कि वह राज्य के किसानों को सन्तुष्ट रखे। [24] राज्य के सभी भागों में जल से भरे हुये बड़े-बड़े तालाब बनवाये तथा मात्र वर्षा के पानी पर ही कृषि न रखे। [25] राजा दीन, अनाथ वृद्ध तथा विधवा स्त्रियों के योगक्षेम एवं जीविका का प्रबन्ध करता था। [26] वर्षा न होने पर जब प्रजा कुआँ खोदकर किसी प्रकार सिंचाई करके कुछ अन्न पैदा करके उसी से जीविका चलाती थी, तो राजा वह धन नहीं लेता था तथा किसी क्लेश में पड़कर रोती हुई स्त्री का भी धन राजा नहीं लेता था। [27] जिनके भरण-पोषण का प्रबन्ध न हो, उनका पोषण राजा स्वयं करता था तथा उसके द्वारा जिनका भरण-पोषण चल रहा हो, उन सबकी देखभाल करता था। [28] राजा का कर्त्तव्य था कि दीनों का धन न लेकर उन्हें महान् भोग अर्पित करे तथा श्रेष्ठ पुरुषों को भूख का कष्ट न दें। [29] राजा राज्य में खेती से उत्पन्न होने वाले अन्न तथा फल-फूल एवं गौओं से प्राप्त होने वाले दूध, घी आदि में से मधु, घृत आदि धर्म के लिये ब्राह्मणों को दिये जाने का ध्यान रखता था। [30] राजा अन्धों, गूंगों, पंगुओं, अंगहीनों तथा बन्धुबान्धवों से रहित

अनाथों तथा संन्यासियों का भी पिता के समान पालन करता था। [31]

राजा अपने राज्य में निवास करने वाले तपस्वीजनों की न्यायपूर्वक रक्षा करता था।(32) धर्मप्रिय राजाओ के द्वारा रक्षित तपस्वीजन अपने धार्मिक कार्य-कलाप सम्पन्न करते थे। साथ ही ये तपस्वीजन अपने पुण्यकर्मों में राजा को भाग देते थे। [33]

जिस प्रकार भ्रमर पुष्पों की रक्षा करता हुआ ही उनके मधु को ग्रहण करता है, उसी प्रकार राजा भी प्रजाजनों को कष्ट दिये बिना उनसे धन लेता था। [34] राजा प्रजा की आय का छठा भाग कर के रूप में लेता था तथा बदले में प्रजा की रक्षा करता था। [35]

राजा का कर्त्तव्य था कि वह अपनी प्रजा को पुत्रों तथा पौधों के समान स्नेहदृष्टि से देखे किन्तु न्याय करने के समय वह स्नेहवश पक्षपात न करे। [36] ऐसा कहा गया है कि जिस प्रकार यमराज समस्त प्राणियों पर समान रूप से शासन करते हैं उसी प्रकार राजा को भी बिना किसी भेदभाव के समस्त प्रजा पर विधिपूर्वक नियंत्रण रखना चाहिये। [37] राजा धर्म की मर्यादा त्यागकर उच्छृङ्खल बने हुये लोगों को अपने दण्ड के द्वारा शिक्षा देता था। [38]

निष्कर्ष

इस प्रकार स्पष्ट है कि न केवल इतिहास तथा प्राचीन उपाख्यानों की दृष्टि से अपितु धर्म-संहिता, आचार-व्यवहार, राजनीति, दर्शन एवं जीवन की अनेक समस्याओं के समाधान हेतु भी महाभारत का अत्यधिक महत्त्व है। धर्म, अर्थ, काम मोक्ष- इन चारों पुरुषार्थों की प्राप्ति के लिये इसके पारायण से आत्मिक- पारिवारिक, सामाजिक- राजनैतिक, ऐहिक अथवा पारलौकिक प्रत्येक सन्दर्भ में मनुष्य को आश्रय प्राप्त होता है। अतः अपने आध्यात्मिक तथा भक्तिपरक विषयों के कारण यह आर्यों की सर्वप्रतिष्ठित धार्मिक पुस्तक है।

संदर्भ

1. धर्मशास्त्रमिदं पुण्यमर्थशास्त्रमिदं परम् ।
   मोक्षशास्त्रमिदं प्रोक्तं व्यासेनामितबुद्धिना ।। महाभारत आदिपर्व 62 / 23
2. इदं हि वेदैः समितं पवित्रमपि चोत्तमम्।
   श्राव्याणामुत्तमं चेदं पुराणमृषिसंस्तुतम् ।। वही आदिपर्व 62/16
3. लोकरञ्जनमेवात्र राज्ञां धर्मः सनातनः।
   सत्यस्य रक्षणं चैव व्यवहारस्य चार्जवम् ।। वही, शान्तिपर्व 57 / 11
4. वही. आदिपर्व 3 / 176, 41/25
5. कच्चिदग्निभयाच्चैव सर्वे व्यालभयात् तथा ।
   रोगरक्षोभयाच्चैवं राष्ट्रं स्वं परिरक्षसि ।। वही, सभापर्व 5 / 124
6. यद्यप्यस्य विपत्तिः स्याद् रक्षमाणस्य वै` प्रजाः ।
   सोऽप्यस्य विपुलो धर्म एवंवृत्ता हि भूमिपाः ।। वही, शान्तिपर्व 58/23
7. गोपायितारं दातारं धर्मनित्यमतन्द्रितम्।
   अकामद्वेषसंयुक्तमनुरज्यन्ति मानवाः ।। वही, शान्तिपर्व 71/12
8. धर्ममेव प्रपद्यन्ते न हिंसन्ति परस्परम् ।
   अनुग्रहयन्ति चान्योन्यं यदा रक्षति भूमिपः ।।
   यजन्ते च महायज्ञैस्त्रयो वर्णाः पृथग्विधैः ।
   युक्ताश्चाधीयते विद्यां यदा रक्षति भूमिपः ।। वही, शान्तिपर्व 68 / 33-34
9. चार्तुवर्ण्यस्य धर्माश्च रक्षितव्या महीक्षिता।
   धर्मसंकररक्षा च राज्ञाः धर्मः सनातनः ॥ वही, शान्तिपर्व 57 / 15
10. अकामात्मा समवृत्ति प्रजासु नाधार्मिकाननुरुध्येत कामान् ।। वही, उद्योगपर्व 29 / 27
11. राष्ट्रे चरन्ति यं धर्मे राज्ञा साध्वभिरक्षिताः ।
    चतुर्थे तस्य धर्मस्य राजा भागं तु विन्दति ।। वही, शान्तिपर्व 72/19-20
12. राजा प्रमाणं भूतानां स नश्येत मृषा वदन्।
    अर्थकृच्छ्रमपि प्राप्य न मिथ्या कर्तुमुत्सहे ।। वही आदिपर्व 82/18

13. न तु केवलदैवेन प्रजा भावेन रेभिरे ।
यद् बभूत मनः कान्तं कर्मणा स चकार तत् ।। वही, आदिपर्व 221/10
14. कच्चित त्वमेव सर्वस्यः पृथिव्याः पृथिवीपते।
समश्चानभिशङ्क्यश्च यथा माता यथा पिता ।। वही, सभापर्व 5/57
15. अनुगृह्य प्रजाः सर्वाः सर्ववर्णानगोपयत् ।।
अविरोधेन सर्वेषां हितं चक्रे युधिष्ठिरः ।
प्रीयतां दीयतां सर्वे मुक्त वा कोषं क्लं विना ।। वही, सभापर्व 33 / 2-3
16. एवंवृत्ते जगत् तस्मिन् पितरीवान्वरज्यत ।। वही, सभापर्व 33/4
17. वही, आदिपर्व 108/6
18. राज्ञः परैः परिभवः सर्वेषामसुखावहः ।
तस्माच्छत्रं च पत्रं वसांस्याभरणानि च।।
भोजनामथ पानानि राज्ञे दद्युर्गृहाणि च ।
आसनानि च शय्याश्व सर्वोपकरणानि च।। वही, शान्तिपर्व 67/ 36-37
19. गोप्ता तस्माद दुराधर्षः स्मितपूर्वाभिभाषिता ।
आभाषितश्च मधुरं प्रत्याभाषेत मानवान् ।। वही, शान्तिपर्व 67/ 38
20. तस्माद बुभूषुर्नियतो जितात्मा नियतेन्द्रियः ।
मेधावी स्मृतिमान् दक्षः संश्रयेत महीपतिम्।। वही शन्तिपर्व 68 /51
21. न ह्ययुक्तं न चासत्यं नासां न च वा प्रियम्।
भाषितं चारुभाषस्य जज्ञे पार्थस्य धीमतः ।।
स हि सर्वस्य लोकस्य हितमात्मन एव च।
चिकीर्षन् सुमहातेजा रेभे भरतसत्तम् ।। वही, आदिपर्व 221/11-12
22. वही, सभापर्व 5/32
23. वही, सभापर्व 5/33
24. वही, सभापर्व 5/77
25. कच्चिद् राष्ट्रे तडागानि पूर्णानि च।
वृहन्ति च भागशो विनिविष्टानि न कृषिर्देवमातृका ।। वही. सभापर्व 5/78
26. कृपणानाथवृद्धानां विधवानां च योषिताम्।
योगक्षेमं च वृत्तिं च नित्यमेव प्रकल्पयेत् ।। वही, शान्तिपर्व 75 / 24
27. वृद्धबालधनंरक्ष्यमन्धस्य कृपणस्य च ।
न खातपूर्वे कुर्वीत न रुदन्ती धनं हरेत् ।। वही अनुशासनपर्व 61/25
28. अभृतानां भवेद् भर्त्ता भृतानामन्ववेक्षकः । वही, शान्तिपर्व 57/19
29. दद्याच्च महतो भोगान् क्षुद्रभयं प्रणुदेत सताम् । वही. अनुशासनपर्व 61/26
30. वही, सभापर्व 5/118
31. कच्चिदन्धांश्च मूकांश्च पंगून् व्यंगानबान्धवान् ।
पितेव पासि धर्मज्ञ तथा प्रव्रजितानपि ।। वही, सभापर्व 5 / 125
32. वही. आदिपर्व 41 / 20-21
33. वही. आदिपर्व 41 /23-24
34. यथा मधु समादत्ते रक्षन् पुष्पाणि षट्पदः।
तद्वदर्थान् मनुष्यैभ्यः आदधादविहिंसया ।। वही, उद्योगपर्व 34 / 17
35. क-वही, आदिपर्व 212 / 9
ख-आददीत बलिं चापि प्रजाभ्यः कुरुनन्दन ।
षड्भागमपि प्राज्ञस्तासामेवाभिगुप्तये ।। वही, शान्तिपर्व 69/25
36. यथा पुत्रास्तथा पौत्रा द्रष्टव्यास्ते न संशयः।
भक्तिश्चैषां न कर्त्तव्या व्यवहारे प्रदर्शिते। वही, शान्तिपर्व 69 / 27
37. यमो यच्छति भूतानि सर्वाण्येवाविशेषत।
तथा राज्ञानुकर्त्तव्यं यन्तव्या विधिवत् प्रजाः ।। वही, शान्तिपर्व 91 /49
38. उद्वृत्तं सततं लोकं राजा दण्डेन शास्ति वे।। वही आदिपर्व 41 / 27